ISSN: 2393-8900 IMPACT FACTOR : 2.7825(UIF) VOLUME - 5 | ISSUE - 9 | MAY - 2019

HISTORICITY RESEARCH JOURNAL

आधुनिक भारतीय समाज में पारिवारिक चुनौतियां

डॉ. रेनू चौहान
असि. प्रोफेसर समाजशास्त्र ,
एस.बी.डी. महिला महाविद्यालय, धामपुर (बिजनौर) उ.प्र.

प्रस्तावना :-

मानव समाज का इतिहास परिवार का इतिहास है, क्योंकि मानव–जीवन के प्रारम्भ से ही परिवार उसके साथ है और किसी न किसी रूप में यह सांस्कृतिक विकास के सभी स्तरों पर पाया जाता है । श्री चार्ल्स कुले ने परिवार को एक ऐसा प्राथमिक समूह माना है जिसमें बच्चे के सामाजिक जीवन व आदर्शो का निर्माण होता है । इस रूप में परिवार व्यक्ति को सामाजिक प्राणी बनाने का एक प्रमुख साधन भी है। इसके अतिरिक्त परिवार ही समाज की प्रारम्भिक इकाई है । परिवार के बिना समाज की निरन्तरता सम्भव नहीं क्योंकि परिवार ही नए बच्चों का उत्पन्न करता है जो मरे हुओं के खाली स्थान पर देते है। इस प्रकार परिवार द्वारा मृत्यु और अमरत्व दो विरोधी अवस्थाओं का सुन्दर समन्वय होता है ।

किंग्सले डेविस ने लिखा है, ''विज्ञान के वर्तमान युग में मनुष्य ने आश्चर्यजनक वस्तुओं का आविष्कार किया है लेकिन इस सत्य का शायद ही कोई अपवाद है कि परिवार और विवाह जेसी सुन्दर संस्थाओं की खोज आज भी मानव की सबसे बड़ी उपलब्धियों में से एक है ।'' मानव समाज के सम्पूर्ण इतिहास में परिवार सबसे महत्वपूर्ण संस्था रही है । सच तो यह है कि सभ्यता का इतिहास वास्तव में, परिवारों से संगठन का इतिहास है । यदि परिवार में बच्चों का पालन–पोषण न किया जाये तथा पारिवारिक सीख के द्वारा संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के लिए हस्तान्तरित न किया जाये तो समाज का अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा । परिवार ही एकमात्र ऐसी संस्था है जो बच्चे को समाज के नियमों से परिचित कराती है, उसमें मानवीयों गुणों का विकास करती है तथा एक जैवकीय प्राणी को सामाजिक प्राणी के रूप में परिवर्तित करती है ।

परिवर्तन प्रकृति का नियम है और एक सतत प्रक्रिया भी । अतः समाज में भी निरन्तर परिवर्तन होते रहना स्वाभाविक है । समाज एक व्यापक अवधारणा है जिसके सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा भौगोलिक अनेक पक्ष हो सकते है । वर्तमान में परिवर्तन के फलस्वरूप सभी में नवीन प्रवृत्तियों का उदय दृष्टिगोचर हो रहा है । प्रस्तुत लेख में केवल भारतीय समाज के कुछ महत्वपूर्ण पक्षों यथा

विाह, परिवार, संस्कृति तथा सामाजिक मूल्यों में उभरती नवीन प्रवृत्तियों का ही विश्लेषण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है ।

परिवार :–

परिवार समाज की बहुत महत्वपूर्ण संस्था है । यह बच्चे की प्रथम पाठशाला मानी जाती है । यही बच्चे का समाजीकरण करती है, बच्चों को समाज के नियमों से परिचित कराती है । बच्चे में मानवीय गुणों का विकास करके उसे एक जैविकीय प्राणी से संस्कारवान सामाजिक प्राणी के रूप में परिवर्तित करती है । भारतीय समाज में लगातार परिवर्तन हो रहा है । अधिकांश व्यक्ति संयुक्त परिवार को छोड़कर एकाकी परिवार में रहना अधिक लाभप्रद समझते हैं । आज प्रथाओं, परम्पराओं, लोकाचारों तथा धार्मिक विश्वासों के बन्धन ढ़ीले पड़ते जा रहे है । धार्मिक कार्यो को भी उपयोगिता और सुविधा के दृष्टिकोण से पूर्ण किया जाने लगा है । परिवार के सदस्यों के मध्य सम्बन्धों में त्याग तथा प्रेम कम होने लगा है । ग्रामों में जो संयुक्त परिवार शेष बचे है, उनकी विशेषताएं भी परम्परागत संयुक्त परिवारों की प्रकृति से दूर हटती जा रही है ।

भारतीय पारिवारिक संरचना तथा पारिवारिक सदस्यों की भूमिका, प्रकृति, जीवन शैली तथा वैचारिकी को इस सीमा तक परिवर्तित करने में वैश्वीकरण की प्रक्रिया का प्रभाव अपेक्षाकृत सर्वाधिक पड़ा है । बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिए बाजार खुल जाने से रोजगार में विविधता तथा अवसरों में बेतहाशा वृद्धि हुई है । पहले जहां गिनी चुनी महिलाएं रोजगार में देखी जाती थीं वहीं आज हर स्त्री कुछ न कुछ रोजगार करने के लिए उत्सुक है । एकाकी परिवारों में पति–पत्नी दोनो के नौकरी करने से एक नये वातावरण का सृजन हुआ है । पति और पत्नी की कार्यस्थली यदि सैकड़ों किलोमीटर की दूरी पर है तो स्थिति और भी अजीब है । दोनो में टेलीफोन पर भले ही प्रतिदिन 5–7 मिनट के लिए बातचीत हो जाये, भौतिक रूप से मिलना बहुत कम होता है । पृथक्करण तथा विवाह विच्छेद जैसे पारिवारिक विघटन के आंकड़ों में इन्हीं हालात के कारण वृद्धि हो रही है । इस स्थिति में नवदम्पतियों में शिशु के पालन पोषण की आज एक गम्भीर समस्या है । ऐसे बच्चों के लिए जहां बड़े नगरों में निजी पालना घर बनने लगे हैं, वहीं सरकार ने भी क्रैंचे नाम से बच्चों के पालन–पोषण के लि सरकारी पालना घर बनाये हैं । बच्चे

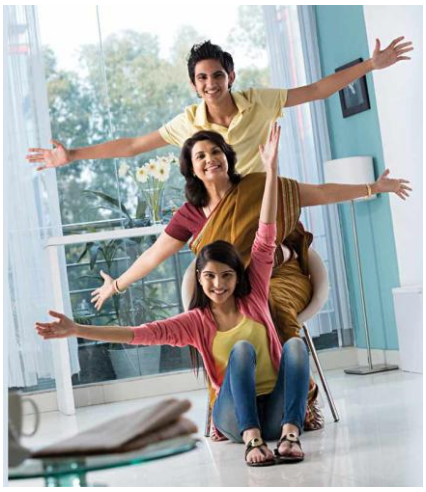

यदि बड़े हैं तो समस्याएं दूसरे प्रकार की है । मां बाप दोनो कामकाजी होने के स्वरूप अपनी व्यस्तता के कारण बच्चों को पर्याप्त समय नहीं दे पाते । फलतः उनमें अपराध बोध पनपता है और विशोरावस्था में तो स्थिति और गम्भीर हो जाती है । आधुनिक जीवन शैली और ऊंची आकांक्षाओं, व्यस्त माता–पिता की उदासीनता, समाज में बढ़ते खुलेपन के कारण लड़के–लड़कियों में मूल्यों, नैतिकताओं और वर्जनाओं के प्रति लापरवाही का भाव तेजी से बढ़ रहा है । स्कूली बच्चों की रूचि डेटिंग, इण्टरनेट पर अश्लील साहित्य और तस्वीरें देखने, एस0एम0एस0 संवाद, व्हाट्सएप पर चैटिंग और सैर–सपाटे में बढ़ रही है । इनका शराब, सिगरेट और सैक्स के प्रति रूझान बढ़ा है अर्थात स्कूली बच्चे के लिए नैतिकता और मूल्यों के अर्थ ही बदले गये है ।

'बेटी बोझ है तो बेटा कुलदीप' यह मानसिकता हमारे समाज की

आज भी नहीं बदली । लेकिन पहले जहां बेटी अथवा बेटी का जन्म ईश्वर की देन मानकर स्वीकार कर लिया जाता था, यह स्थिति जरूर बदल गई है । आधुनिक उन्नत चिकित्सीय तकनीक ने मनचाही सन्तान को जन्म देने का मार्ग प्रवास्त किया है । अतः लोग बेटी को जन्म ही नहीं देना चाहते । इच्छित सन्तान की प्राप्ति आधुनिक शिक्षित व सभ्य समाज की पहचान बन गई है । परिणामस्वरूप लिंगानुपात घट रहा है । लिंगानुपात का अर्थ है–प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की संख्या। सनृ 1901 में भारत का लिंगानुपात 972 था जो गिरते–गिरते सन् 2011 में 943 पर पहुँच गया । हरियाणा जैसे समृद्ध राज्य में स्त्रियां तथा 0–6 वर्ष की बालिकाओं की संख्या लिंगानुपात की दृष्टि से भारत में सबसे कम है । शिशु का लिंग परीक्षण कराना व अनचाही सन्तान से छुटकारा पाना आज सहज है । देश में कन्या भ्रूण हत्या एक बड़ा व्यवसाय बन का उभरा है । प्रतिवर्ष 10 लाख से ज्यादा लड़कियों को जन्म लेने से पहले ही मार दिया जाता है । अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि कामकाजी महिलाओं में मात्र 11.25 प्रतिशत ही कन्या शिशु के जन्म को वरीयता देती है ।

आज पारिवारिक सदस्यों के मध्य रिश्तों की गर्माहट, परस्पर प्रेम, स्नेह, त्याग, सहानुभूति और अपनत्व कम हुआ है । भाग दौड़ भरी जिन्दगी में पति के पास समय का अभाव है और धन की उपलब्धता के बाद भी महिलाएं अकेलेपन और बच्चे तनाव से ग्रस्त देखे जा सकते है । ऐसे परिवारों में बुजुर्ग त्याज्य बन गये है । भारत में वृद्धों की स्थिति आज अत्यन्त दयनीय है ।

विवाह :–

समाज की महत्वपूर्ण इकाई परिवार है और परिवार की नींव विवाह है । विवाह का इतिहास बहुत प्राचीन है । विवाह एक ऐसी संस्था है जो किसी न किसी रूप में प्रत्येक समाज में विद्यमान रही है और आज भी है । मानव की विभिन्न प्राणिशास्त्रीय आवश्यकताओं में यौन सन्तुष्टि एक आधारभूत आवश्यकता है । इसी आवश्यकता ने विवाह नामक संस्था को जन्म दिया है । वेस्टमार्क ने विवाह संस्था के इतिहास की विशद व्याख्या करते हुए विवाह के प्रकार, एक विवाह, बहुपत्नी विवाह, बहुपति विवाह, समूह विवाह तथा अन्य सामूहिक सम्बन्धों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत किया है । पति अथवा पत्नी को प्राप्त करने के प्रत्येक समाज में कुछ वैधानिक तरीके होते हैं जिन्हें समाज की स्वीकृति प्राप्त होती है । यह तरीके ही वस्तुतः विवाह कहलाते हैं, जिनका मूल है प्रजनन द्वारा मनुष्य जाति को बनाये रखना । प्रमुख समाजशास्त्री जॉनसन लिखते है – ''विवाह के सम्बन्ध में आवश्यक बात यह है कि यह एक स्थाई सम्बन्ध है, जिसमें कि एक पुरूष तथा एक स्त्री समाज में अपनी प्रतिष्ठा की हानि किये बिना सन्तान उत्पन्न करने की सामाजिक स्वीकृति पाते हैं ।'' भारतीय हिन्दू समाज में विवाह एक धार्मिक संस्कार है, इसका उद्देश्य केवल कामवासना को तृप्त करना नहीं है । हिन्दू धर्मशास्त्रों के अनुसार विवाह के तीन मुख्य उद्देश्य–धर्म का पालन, सन्तान की प्राप्ति तथा रति है ।

आधुनिकीकरण ने जहां भारतीय समाज के अन्य पक्षों को प्रभावित किया, वहीं हिन्दू विवाह के उद्देश्यों – धर्म, प्रजा और पति में से धर्म और प्रजा को गौण बनाकर रति को प्रमुखता प्रदान की है, जिससे विवाह जैसी संस्था के प्रति लोगों में आस्था और विश्वास परिवर्तित हुआ है । स्वाधीन भारत में हिन्दू विवाह अधिनियम–1955 लागू होने के बाद से एक पुरूष–एक महिला के मध्य विवाह (एक विवाह) का कानून है और समाज का आदर्श भी, किन्तु विगत दो दशक में भारत के वैवाहिक क्षेत्र में निम्नांकित कुछ नवीन प्रवृत्तियों का उदय हुआ है :–

(i) नो मैरिज :–

भारतीय युवजन विशेष रूप से उच्च शिक्षित नवयुवतियों में 'नो मैरिज' की अवधारणा ने जन्म लिया है । आज की युवती विवाह ही नहीं करना चाहती । जीवन भर एकाकी जीवन जीने को अपेक्षाकृत महत्व प्रदान करने लगी है । डा0 सुषमा नयाल ने ''विवाह की आवश्यकता'' अपने शोध में उत्तराखण्ड राज्य को श्रीनगर की हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय में अध्ययनरत छात्राओं का अध्ययन किया जिसका कारण बताते है कि आज 34 प्रतिशत शिक्षित युवतियां विवाह को आवश्यक नहीं मानती उनके अनुसार विवाह व्यक्तिगत स्वतंत्रता में बाधक है, पारिवारिक विघटन का मुख्य कारण है तथा महिलाओं के कैरियर और कामकाजी बनने में बड़ी बाधा है । विवाह के बारे में उच्च शिक्षित युवतियों की यह अभिवृत्ति एक बड़े बदलाव की ओर संकेत करती है ।

(ii) सिंगल पेरेन्ट्स :–

युवतियों में एक नवीन अवधारणा ''सिंगल पेरेन्ट्स'' की उभरी है । यह युक्ति उन महिलाओं ने निकाली है जो बच्चों को जन्म देकर माँ बनना चाहती है । किन्तु विवाह के बन्धन में नहीं बंधना चाहती है । वैवाहिक जीवन के झंझटों से स्वयं को मुक्त रखना चाहती है । बालीवुड की कुछेक भारतीय अभिनेत्रियां इसका उदाहरण है ।

(iii) लिव इन रिलेशनशिप :–

इस दशा में पुरूष–महिला दोनो बिना विवाह किये पति–पत्नी की भांति (किन्तु पति–पत्नी नहीं होते) एक ही छत के नीचे साथ–साथ रहते हैं । भारत में यह प्रवृत्ति दिनो–दिन बढ़ रही है । न्यायालय भी 'लिव इन रिलेशनशिप' को मान्यता दे चुका है और इसी का परिणाम है कि समाचार–पत्रों में छपने वाले वैवाहिक विज्ञापनों में अब लोग 'लिव इन रिलेशनशिप' का विज्ञापन भी देने लगे हैं ।

(iv) सरोगेसी मदर :–

यह स्थिति 'किराये की कोख' नाम से जानी जाती है जो दम्पति माता–पिता तो बनना चाहते हैं, किन्तु जैविकीय कारणों से माता–पिता नहीं बन सकते हैं, वे किसी अन्य महिला से उसकी कोख का अनुबन्ध करते हैं तथा उसके बदले धन का भुगतान करते हैं । इसलिए इसे 'किराये की कोख' नाम दिया गया है ।

(v) समलैंगिक विवाह :–

समान लिंग वाले व्यक्तियों के बीच विवाह समलैंगिक विवाह तथा यौन सम्बन्ध समलैंगिक सम्बन्ध कहलाते हैं । दो पुरूषों के बीच सम्बन्ध को गे (Gay) तथा दो महिलाओं के मध्य सम्बन्ध को लेस्बियन (Lesbian) कहा जाता है । समलैंगिक लोगों के अधिकारों की रक्षा करने और उन्हें वैधानिक मान्यता दिलाने के लिए L.G.B.T. (Lesbian Gay Bisexual and Transgender) नामक समुदाय विश्व स्तर पर एक स्वैच्छिक संगठन के रूप में सक्रिय है । विश्व के 77 देशों ने समलैंगिक सम्बन्धों को अप्राकृतिक मानते हुए अपराध की श्रेणी में शामिल कर रखा है । कुछ देशों (ईरान, सऊदी अरब, यमन, सूडान आदि) में तो मौत की सजा तक का प्राविधान है । यद्यपि विश्व के 114 देश समलैंगिकता को अपराध नहीं मानते हैं । समलैंगिक

सम्बन्धों को सर्वप्रथम नीदरलैण्ड द्वारा मान्यता प्रदान की गई थी तथा 2001 में समलैंगिक विवाह को मान्यता देकर एक नई पहल भी इसी देश ने की है । वर्तमान में 13 देशों में इस विवाह को मान्यता प्राप्त है ।

मानवाधिकारों एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर बढ़ी वैश्विक चेतना के बाद तो भारतीय समाज में भी समलैंगिकता जैसी प्रवृत्तियां खुलकर सामने आने लगी हैं । खुलेपन के नाम पर समाज द्वारा वर्जित इन मूल्यों को स्वीकार किये जाने का दबाव बनाया जाने लगा है तथा बहस तेज हुई है । सरकार द्वारा इसे कानूनी मान्यता प्रदान जाने के लिए सम्बन्धित संगठन अपनी आवाज उठाते रहते हैं । नाज फाउन्डेशन (संस्थापिका–अंजलि गोपालन) L.G.B.T. एवं मानवाधिकारवादी कई गैर सरकारी संगठन समलैंगिकों के अधिकारों के लिए आन्दोलनरत है इन्होंने पिंक पेजेज नामक एक ऑनलाईन मैगजीन प्रारम्भ की है जो समलैंगिकों में काफी लोकप्रिय है । ऐसा माना जाता है कि भारत में लगभग 25 लाख लोग समलैंगिक हैं । गुजरात की राजपीपला रियासत के राजकुमार मानवेन्द्र सिंह गोहिल ने 2005 में खुलेआम स्वयं को समलैंगिक घोषित किया था । बॉलीवुड़ अभिनेत्री सेलिना जेटली ने भी समलैंगिकता का समर्थन करते हुए 16 अप्रैल, 2009 को ''बोम्बे दोस्त'' नामक पहली गे मैगजीन का उद्घाटन किया था, इसकी शुरूआत 1990 में पत्रकार अशोक राव द्वारा की गई थी ।

कानूनी दृष्टि से भारतीय दण्ड संहिता की धारा 377 जिसमें समलैंगिक सम्बन्धों को आपराधिक कृत्य की श्रेणी में रखा गया है, को दिल्ली उच्च न्यायालय ने 2 जुलाई 2009 को असंवैधानिक ठहराया था । धारा 377 में प्रकृति की व्यवस्था के विरूद्ध इन्द्रिय भोग (Carnal intercourse against the order of nature) के अपराध के लिए आजीवन कारावास तक की सजा का प्राविधान है । दिल्ली उच्च न्यायालय के इस निर्णय के बाद तो भारत में दिल्ली, बेंगलुरू, भुवनेश्वर तथा मुम्बई में गे–परेडों का आयोजन किया गया । मुम्बई में 2010 में समलैंगिक सम्बन्धों पर आधारित कशिश–क्वीर फिल्म फेस्टिवल का आयोजन किया गया तथा इन सम्बन्धों पर आधारित बॉलीवुड में कई फिल्मों का निर्माण भी किया गया । यद्यपि उसके बाद 11 दिसम्बर 2013 को सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय को पलटते हुए पुनः समलैंगिक यौन सम्बन्धों को अपराध ठहराकर भारतीय दण्ड संहिता की धारा 377 को संवैधानिक रूप से सही करार दिया है।

सैद्धान्तिक दृष्टि से कुछ वैज्ञानिक समलैंगिकता को एक जैविकीय प्रवृत्ति मानते हैं तो कुछ इसे मानसिक विकृति या मनोवैज्ञानिक ग्रन्थि का परिणाम मानते है । योग गुरू बाबा रामदेव भी कहते हैं कि समलैंगिकता एक मानसिक विकार है तथा उनके आश्रम में इसका सफल इलाज किया जा रहा है । समलैंगिक प्रवृत्तियां विवाह, परिवार तथा नातेदारी जैसी सामाजिक संस्थाओं को चुनौती देती नजर आ रही है । जब हम उसके नैतिक और और धार्मिक पक्ष को देखते हैं तो यह हमारी सनातन संस्कृति एवं संज्ञकारों पर कुठाराघात लगता है ।

संस्कृति :–

पूंजीवाद समाज व्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं में उपभोक्तावाद एक महत्वपूर्ण अभिलक्षण है । उपभोक्तावादी संस्कृति का विकास वैश्वीकरण के प्रमुख उत्पादों में से एक है । इसीलिए वैश्वीकरण ने भारतीय समाज के सांस्कृतिक जीवन मूल्यों, विचारों, मान्यताओं तथा तार्किकता को भी अत्याधिक प्रभावित किया है । मूलतः वैश्वीकरण अन्तर्राष्ट्रीय बाजार एवं निवेश ही नहीं हुई है, सांस्कृतिक प्रक्रिया भी है। आर्थिक पहलुओं के साथ वैश्वीकरण सांस्कृतिक फलाव की भी चर्चा करता है । वैश्वीकरण ने वास्तव में सांस्कृतिक साम्राज्यवाद को बढावा दिया है, आज विभिन्न संस्कृतियों का परस्पर समागम हो रहा है ।

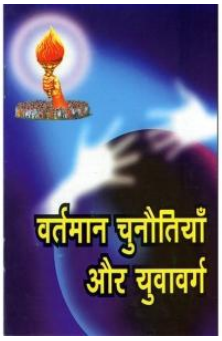

भारत का समाज एक ऐसे उपभोक्तावादी समाज के रूप में विकसित हो रहा है, जहां बाजारवाद भारतीयों की एक नई जीवन शैली बनकर उभरा है । जीवन का प्रत्येक क्षेत्र अब बाजार द्वारा निर्धारित व संचालित हो रहा है । बाजार सुन्दरता को सेक्स अपील से जोड़ता है, धर्म और आध्यात्म का व्यावसायीकरण करता है और प्रेम को प्रदर्शन की वस्तु मानता है । यह अश्लीलता एवं नग्नता को कला, संस्कृति व स्वतन्त्रता से जोड़ने में भी कोई संकोच नहीं करता । बाजारवाद मात्र वस्तुओं के क्रय–विक्रय तक सीमित नहीं है बल्कि टेलीविजन, केबिल तथा इण्टरनेट के माध्यम से ऐसे मूल्यों को मध्यवर्गीय उपभोक्ता के अन्तस तक पहुँचा रहा है, जो हमारे सांस्कृतिक मूल्यों से मेल नहीं खाते बल्कि उन्हें कुरूप और विकृत बनाते हैं । बाजार की शक्तियों ने यौन कुंठा को हवा दी है तो वहीं बंद सामाजिक व्यवस्था ने आग में घी का काम किया है । शहरों के वीडियो पार्लरों का सर्वेक्षण बताता है कि ब्लू फिल्म देखने वाले मध्यमवर्गीय ग्रहकों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है । सेक्स अपील बढाने की गारण्टी वाले ब्यूटी पार्लर देश भर में जगह–जगह फैले हैं जिनके द्वारा स्कूली लड़कियां ही नहीं, उनकी मां भी सुन्दर बनने के लिए इच्छुक हो उठी है। आत्मा की अमरता की बात करने वाली संस्कृति आज शरीर के सौन्दर्य व दैहिक सुख के मायाजाल में भयंकर रूप से फंसी हुई है । यौन सम्बन्धी वर्जनाएं भंग करने की ललक न केवल व्यस्कों में बढी है, बल्कि मासूम बच्चे भी इस सुख से वंचित नहीं रहना चाहते । बच्चों द्वारा यौन वर्जना तोड़ने के ऐसे उदाहरण गांवों में भी दिखने लगे हैं । जिला कोरापट (उड़ीसा) के गांव में एक ही आवासीय स्कूल में रहकर कक्षा–8 में पढने वाली दो नाबालिग लड़कियों ने 27 फरवरी 2015 तथा 5 मार्च 2015 को बच्चों को जन्म दिया । धर्मशाला (हिमाचल प्रदेश) के पास गांव की एक 14 वर्षीय लडत्रकी ने बच्चें को जन्म दिया। 14 वर्षीय देवयानी कहती है कि – ''इसमें हंगामा किस बात का ? छूना–छुआना और चुम्बन तो आम बात है, मगर मुझे नहीं लगता कि कोई पूरा सेक्स करता होगा । उसका कहना है कि अगर स्कूली बच्चे सैक्स सम्बन्ध बनाये तो इसमें औरों को क्यों गुरेज होना चाहिए ।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया से जहां भारत में नई सूचना, संचार तथा प्रौद्योगिकीय क्रान्ति का प्रसार तेजी से हुआ, वहीं इसने परिवार, जाति, विवाह, नातेदारी, जीवन पद्धति, मूल्य, दर्शन, परम्परा तथा धर्म नीतियों को व्यापक रूप से प्रभावित किया है । इसी के कारण आज भारत एक नये सांस्कृतिक दोराहे पर खड़ा है । उत्तर आधुनिक संस्कृति का जो चरित्र भारतीय समाज में उभर रहा है, उसे नैतिकता गुरू और शर्म लिहाज से शून्य की संज्ञा दी जा सकती है ।

सामाजिक मूल्य :–

सम्पूर्ण समाज के संगठन और व्यवस्था का आधार सामाजिक मूल्य हैं । सामाजिक मूल्य वे प्रतिमान है जो मानव व्यवहार को नियन्त्रित करते हैं, मनुष्य की विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तथा पूर्ति के लिए मार्गदर्शन करते हैं । ये एक प्रकार से सामाजिक माप या पैमाना है जिसके आधार पर हम किसी व्यक्ति के व्यवहार, वस्तु के गुण, लक्षण, साधन एवं भावनाओं आदि को उचित या अनुचित तथा अच्छा या बुरा ठहराते हैं । इन मूल्यों को व्यक्ति समाजीकरण द्वारा सीखता है, उनका अन्तरीकरण करता है तथा उन्हीं के अनुरूप आचरण करने की सोचता है । सामाजिक मूल्य सभ्य और सुसंस्कृत समाज की पहचान है । मूल्यों के बिना मानव जीवन घिनौना, पशुवत और बहुत छोटा हो जायेगा । अतः मानव समाज, कल्याण, सामाजिक एकता, संगठन तथा नियन्त्रण के लिए प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह मूल्यों का पालन तथा उनका संश्रखण आवश्यक रूप से करे ।

विडम्बना है कि आज भारतीय जीवन के आदर्शो में शिथिलता आ रही है और इसी कारण निरन्तर मूल्यों में गिरावट बढ़ती जा रही है तथा नई–नई सामाजिक बुराईयां पनप रही हैं । समाज में सामाजिक मान्यताओं की

उपेक्षा करना, सामाजिक मूल्यों का उल्लंघन करना, उन्हें स्वीकार न करना, उनके विरूद्ध आचरण करना आम होता जा रहा है । समाज में सत्य, अहिंसा, प्रेम, त्याग, और भाईचारे की भावना के स्थान पर हिंसा, द्वेष, व्यक्तिवाद और लूटखसोट ने अपना स्थान बना लिया है । व्यक्तिगत स्तर पर बेईमानी, घूसखोरी, घृणा, हिंसा, अवहेलना, अकर्मण्यता आदि आदि तो सामाजिक स्तर पर तरह तरह के अपराध, शोषण, भ्रष्टाचार, अश्लीलता, साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, कालाबाजारी, तस्करी आदि दिनोदिन फल–फूल रहे हैं । स्थापित मूल्यों को व्यक्तिगत हित में तोड़ा मरोड़ा जा रहा है । आज मूल्यों का संगठन जीवन के हर क्षेत्र में दिखाई पड़ता है चाहे वह आर्थिक हो, शिक्षा हो या स्वास्थ्य हो । यही कारण है कि अफसरों, कम्रचारियों, शिक्षकों, डाक्टरों तथा सार्वजनिक क्षेत्र में काम करने वाले अधिकारियों में अपने दायित्व के प्रति वह उत्साह और कर्तव्यपरायणता दिखाई नहीं देती, यद्यपि अपवाद हो सकते हैं । पूंजीवादी व्यवस्था में धनलोलुपता बेतहाशा बढ़ी है । उचित अनुचित, नैतिक–अनैतिक तथा अच्छे–बुरे की चिन्ता न करते हुए बस येन–केन धन कमाना ही एक मात्र उद्देश्य बन गया है । भारत का कितना धन विदेशी बैंकों में जमा है, मध्य प्रदेश में तो विगत दो–तीन वर्षो में ही अनेक धन कुबेर अफसरों और साधारण कर्मचारियों का पर्दाफाश हुआ है । स्वतन्त्र भारत में देश के सर्वागीण विकास हेतु अनेक योजनाएं बनी और चलाई गयी किन्तु अरबो–खरबो रूपया खर्च होने के बाद भी लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकी । इसका मूल कारण मूल्यों में गिरावट ही है । स्वर्गीय राजीव गांधी जब देश के प्रधानमंत्री थे, तब उन्होंने एक बार कहा था कि सरकार यदि किसी योजनान्तर्गत एक रूपया भेजती है तो मात्र व्यक्ति तक उसमें से 15 पैसे ही पहुँच पाते है । यह तो 25 वर्ष पहले की दशा थी, आज की दशा का अनुमान स्वतः लगाया जा सकता है । देश में गरीब जनता के पैसे के दुरूपयोग की यह चरम सीमा है ।

पीढ़ी दर पीढ़ी मूल्यों के हस्तान्तरण का काम परिवार और शिक्षालयों के द्वारा किया जाता था किन्तु आज ये दोनो संस्थाएं अपनी उस भूमिका को निभाने में असफल हो रही है । आज मूल्य हस्तान्तरण के माध्यम बदल गये हैं । पत्र–पत्रिकाएं, जनसंचार माध्यम, टी0वी0 चैनल, उदारीकरण, वैश्वीकरण तथा इसी प्रकार की अनेक प्रक्रियाओं से नये–नये मूल्यों को समाज के सामने प्रस्तुत किया जा रहा है ।

देश में 65 प्रतिशत आबादी युवजनों की है जिस पर देश का भविष्य टिका है। यदि हम केवल उस पर ही दृष्टिपात करें तो युवजन, विशेषकर मध्यमवर्गीय शिक्षित युवजन अब परम्परागत वेशभूषा की बजाए पाश्चात्य वेशभूषा को पसंद करता है, फास्ट फूड और कोल्ड ड्रिंक्स (प्रातः केवल ड्रिंक्स) उसको अधिक प्रिय है तथा खाली समय में मोबाइल फोन पर व्यस्त दिखाई देता है । चिन्तन के लिए आज के शिक्षित युवजन के पास समय नहीं है । अन्त में कह सकते हैं कि भारत में पारम्परिक सामाजिक व्यवस्था, संस्कार, जीवन मूल्य धीरे–धीरे नवजात मूल्यों तथा प्रतिमानों द्वारा विस्थापित किये जा रहे है, जिनका अन्तिम स्वरूप प्राप्त होना अभी शेष है ।

सन्दर्भ सूची

1. इन्टरनेट सर्चिंग
2. वेस्टमार्क, के0एडवर्ड, ''हिस्ट्री ऑफ ह्यूमन मैरिज,'' मैकमिलन एण्ड कं0, लन्दर, 1921, पृष्ठ 3–26
3. एन0सी0टी0 देहली बनाम नाज फाउन्डेशन इण्डिया ट्रस्ट, 2013, सर्वोच्च न्यायालय।
4. इण्डिया टुडे, 18 जुलाई, 2007, पृष्ठ 41–47
5. मिश्रा, गिरीश, ''ग्लोबलाइजेशन एण्ड कल्चर, सम आसपेक्ट्स,'' मेन स्ट्रीम, 16 अगस्त, 2003, पृष्ठ 15
6. हिन्दुस्तान टाईमस, अंग्रेजी दैनिक, नई दिल्ली, 09 मार्च 2015, पृष्ठ–7
7. जोशी, मनोहर श्याम, 'ब' से ब्रह्मचर्य, 'भ' से भोग, आउटलुक, 17 मई 2004, पृष्ठ–34

डॉ. रेनू चौहान
असि. प्रोफेसर समाजशास्त्र , एस.बी.डी. महिला महाविद्यालय, धामपुर (बिजनौर) उ.प्र.